P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-11* July- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

महिला मानवाधिकार एवं जनहित याचिका

पुष्पा बुटोलिया
असिसटेन्ट प्रोफेसर,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय कला महाविद्यालय
दौसा, राजस्थान

सारांश

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद मानवाधिकारों के लिए नियमित रूप से प्रयास किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने सार्वभौम मानवधिकार घोषित कर विश्व के नागरिकों को व्यापक अधिकार प्रदान किए। भारतीय संविधान में मानव अधिकारों को स्वीकारा गया व उनके उल्लंघन की स्थिति में उपचार की भी व्यवस्था संविधान में की गई है। विभिन्न संवैधानिक और संवैधानिकोत्तर प्रावधानों में महिला मानवधिकारों का वर्णन किया गया है जिनके संरक्षण राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, 1993, राजस्थान में राज्य मानवाधिकार आयोग, 2000 की स्थापना हुई एवं प्रत्येक जिले में मानव अधिकार न्यायालय का प्रावधान रखा गया और इसी क्रम में राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1990 के तहत् महिला आयोग का गठन किया गया जिसका उद्देश्य महिला समस्याओं के निवारण महिला शोषण का अंत एवं महिला अधिकारों की रक्षा करते हुए महिला विकास को गति प्रदान करना है। न्यायापालिका ने सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा को लोकहित वाद के माध्यम से एक साकार रूप में नई दिशा प्रदान करने में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। इनकी अधिकारिता उच्चतर न्यायालयों को संविधान के अनु. 32 में तथा अनुच्छेद 226 मे तहत् उच्च न्यायालयों को प्रदान की गई है। लोकहितवाद का मुख्य उद्देश्य समाज में कमजोर, शोषित व पीड़ित वर्ग को न्याय सुलभ कराना है। यह मानवाधिकारों की अवधारणा का पोषक है। भारत में न्यायिक प्रणाली एक विस्तृत प्रणाली है परन्तु वर्तमान में न्यायिक सक्रियता एवं लोकहित वादि अवधारणा के परिणाम स्वरूप न्यायिक प्रणाली मानवीय अधिकारों के संरक्षण का प्रभावशाली तंत्र बन गया है। वर्तमान में महिला अधिकारों के विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ते उल्लंघनों और बढ़ते अपराध, शोषण के मध्यनजर न्यायापालिका ने काफी सक्रियता दिखायी है और महिलाओं को न्याय दिलाने, शोषण से मुक्ति दिलाने का सक्रिय प्रयास किया है। जनहित याचिकाओं के द्वारा सामने आये महिला शोषण व अधिकारों के हनन के मामलों ने न्यायालय ने तुरन्त निर्णय लिए व अपराधियों को कठोरतम सजा दी गई।

मुख्य शब्द :

प्रस्तावना

अधिकार मानव जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। इसके बिना न तो व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास कर सकता है और न ही समाज के लिए कोई उपयोगी कार्य कर सकता है। अधिकार के बिना मानव जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। राज्य का सर्वोत्तम उद्देश्य एवं लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना है। राज्य द्वारा व्यक्ति को प्रदान की जाने वाली इन सुविधाओं का नाम ही अधिकार है। लास्की के अनुसार अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ है जिनके बिना कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास नहीं कर सकता है। राज्य को वे सभी अधिकार प्रदान करने चाहिए जो व्यक्तित्व के निर्माण में सहयोगी होते है तथा उन स्थितियों को समाप्त करना चाहिए जो उसके विकास में बाधक बनती है।[1] मनुष्य के लिए जहाँ रोटी, कपड़ा और मकान अनिवार्य एवं आवश्यक है, वहाँ इसके साथ कुछ अन्य चीजें भी आवश्यक है जो आधुनिक समाज के लिए मानव को सार्थक बनाता है। इनमें मानव–अधिकार भी शामिल है। मानव अधिकार वे अधिकार है जो एक मानव को मानव होने के लिए चाहिए, मानव अधिकार आधारभूत होते है। जीवन की मानवीय गरिमा तथा उच्चतर मानव मूल्य इन आधारभूत अधिकारों पर निर्भर स्वशासन का भाव निहित है।[2]

मानव अधिकारों की संकल्पना व संरक्षण

मानव अधिकारों के संवर्द्धन और संरक्षण का आन्दोलन आज विश्व स्तर पर चल रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ अधिकार पत्र में संयुक्त राष्ट्र संघ तथा इसके

सदस्यों पर स्पष्ट रूप से यह दायित्व सौंपा कि मानवाधिकार तथा मौलिक स्वतंत्रता के लिए सम्मान की भावना को प्रोत्साहन दे। संघ के चार्टर के अंतर्गत

यह स्पष्टतः अभिव्यक्त किया गया। कि संयुक्त राष्ट्र संघ के समस्त सदस्य यह प्रतिज्ञा करते हैं कि वे प्रजाति, लिंग, भाषा तथा धर्म के भेदभाव के बिना मानव मात्र के लिए मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं की प्राप्ति तथा उनके प्रति सम्मान की भावना को प्रोत्साहित करने के लिए संघ के साथ सहयोग पूर्ण सम्मिलित रूप से तथा पृथक–पृथक प्रयास करेंगे।[3] मानवाधिकारों के प्रारूप की रचना के लिए मानवाधिकार आयोग गठित किया गया।[4]

आयोग द्वारा किए गए प्रयत्नों के फलस्वरूप मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा का मसौदा तैयार किया गया तथा 10 दिसम्बर, 1948 को महासभा द्वारा कुछ संशोधनों के साथ इसे सर्वसम्मति से स्वीकार किया गया। मानवाधिकार घोषणा–पत्र में उन अधिकारों का उल्लेख है, जिन्हें विश्व भर के स्त्री–पुरूष बिना भेदभाव के पाने अधिकारी है। इसी संकल्पना को साकार रूप प्रदान करने के लिए और देश में मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना 12 अक्टूम्बर, 1993 को की गई। इस आयोग का विधान मानव अधिकार संरक्षण (संशोधन) अधिनियम, 2006 द्वारा यथा संशोधित मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1993 में निहित है। यह मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्धन के लिए अक्टूबर, 1991 पेरिस में आयोजित राष्ट्रीय संस्थानों से संबंधित प्रथम अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला में अंगीकृत और संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 20 दिसम्बर, 1993 के संकल्प संख्या 48/134 द्वारा पृष्ठांकित पेरिस सिद्धांतों के अनुरूप है।[5] मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम के अध्याय पाँच में राज्य मानव अधिकार आयोग की स्थापना के लिए प्रावधान किया गया जिसके तहत् राजस्थान में वर्ष 2000 के प्रथम त्रिमास में राज्य मानवाधिकार आयोग का गठन हुआ। अधिनियम के अध्याय चार मे प्रत्येक जिले के लिए मानव अधिकार न्यायालय का प्रावधान है।[6]

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत पत्र के अध्ययन का उद्देश्य महिलाओं को न्यायिक / विधिक जानकारी किस–किस तरीके से उपलब्ध कराई जा सकती है और कौनसी न्यायिक प्रविधि निःशुल्क रूप से उपलब्ध हो सकती है। इस शोच की पृष्ठभूमि के पीछे जितनी भी जनहित याचिकाएँ भारत के न्यायालयों में लगी उनसे अवगत कराकर महिलाओं को मानसिक रूप से सशक्त करने का एक प्रयास है। देश में महिलाओं पारिवारिक, सामाजिक एवं आर्थिक शोषण का शिकार होती रही हैं उनको स्वयं के कानूनी एवं संवैधानिक अधिकारों की जानकारी देना एवं न्यायालयों द्वारा न्यायिक प्रक्रिया एवं न्यायालयों में प्रस्तुत जनहित याचिकाएँ उनके इन अधिकारों की रक्षा करने में किस हद तक सफल हुई है। पत्र के माध्यम से जानने का प्रयास किया गया है।

साहित्यावलोकन

जनहित याचिका नियमित न्यायिक प्रक्रिया से भिन्न है। हालांकि यह समकालीन भारतीय कानून व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग है। आरम्भ में भारतीय कानून व्यवस्था में इसे यह स्थान प्राप्त नहीं था। इसकी शुरुआत अचानक नहीं हुई, वरन् कई राजनैतिक और न्यायिक कारणों से धीरे–धीरे इसका विकास हुआ। कहा जा सकता है कि 70 के दशक में शुरुआत होकर 80 के दशक में इसकी अवधारणा पक्की हो गयी थी। भारत के 17वें मुख्य न्यायाधीश पी. एन. भगवती जनहित याचिका के पिता के रूप में जाने जाते हैं। आपातकाल के दौरान नागरिक स्वतन्त्रता का जो हनन हुआ था, उसमें उच्चतम न्यायालय के ए.डी.एम. जबलपुर और अन्य और शिवकान्त शुक्ला (1976) केस, जिसके फैसले में न्यायालय ने कार्यपालिका को नागरिक स्वतन्त्रता और जीने के अधिकार को प्रभावित करने की स्वतन्त्रता दी थी, का भी योगदान माना जाता है। इस फैसले में अदालत के नागरिक स्वतन्त्रता के संरक्षक होने की भूमिका पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया। आपातकाल के पश्चात् न्यायालय के रुख में गुणात्मक बदलाव आया और इसके बाद जनहित याचिका के विकास को कुछ हद तक इस आलोचना की प्रतिक्रिया के रूप में देख सकते हैं।[7] मेनका गाँधी और भारतीय संघ (1978) केस में न्यायालय ने ए. के. गोपालन केस के निर्णय को पलटकर जीवन और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के अधिकारों को विस्तारित किया।[8]

जनहित याचिका का प्रथम मुकदमा 1979 में हुसैन आरा खातून और बिहार राज्य (AIR 1979 SC. 1360) केस में कारागार और विचाराधीन कैदियों की अमानवीय परिस्थितियों से संबद्ध था। बिहार की जेलों में बन्द हजारों कैदियों के हाल का **द इंडियन एक्सप्रेस अखबार** में वर्णित खबर को आधार बनाकर श्रीमती पुष्पा कपिला हिंगोरानी जनहित याचिका की माता ने भारत की प्रथम जनहित याचिका सर्वोच्च न्यायालय में दाखिल की। मुकदमें के नतीजतन 40,000 से भी ज्यादा कैदियों को रिहा किया गया था।[9]

इस प्रकार न्यायिक सक्रियता का लाभ आम आदमी को मिलने लगा और सर्वोच्च न्यायलय ने बहुत सारे क्षेत्रों को जनहित याचिका के अन्तर्गत लेते हुए आप जनता को आवश्यक लाभ दिलवाया। सर्वोच्च न्यायालय आम नागरिक की स्वतन्त्रता की रक्षा, बन्धुता मजदूर, उपेक्षित बच्चे, कामगारों को न्यूनतम वेतन तथा शोषण, कैदियों के मूल अधिकारों की रक्षा, पुलिस द्वारा मुकदमा दर्ज करने में आनाकानी, महिलाओं के बलात्कार, शोषण, हत्या, अपहरण जैसे मुद्दे, अनुसूचित जाति एवं जनजाति तथा आर्थिक रूप से पिछड़ों के अधिकारों के संरक्षण, पर्यावरण, प्रदूषण, वन तथा वन्य जीव संरक्षण, जल संरक्षण आदि जैसे मुद्दों, सांप्रदयिक दंगों, पारिवारिक पेंशन आदि संवेदनशील मुद्दों पर जनहित याचिका स्वीकार करता है तथा प्राथमिकता से अधिक गति एवं कम समय में न्याय दिलवाया जाता है।[10] सूर्यदेवा ने अपनी पुस्तक **पब्लिक इन्टरेस्ट लिटेरोशन इन इंडिया : ए क्रिटिकल रिव्यु** में उक्त वर्णित सभी क्षेत्रों से संबंधित जनहित याचिकाओं का विस्तृत वर्णन किया है।[11]

मानवाधिकार व महिला

इन संस्थाओं का उद्देश्य सभी नागरिकों न केवल पुरुषों बल्कि महिलाओं के मानवधिकारों की रक्षा करना है। चूँकि समाज के निर्माण एवं विकास में स्त्री व पुरूष दोनों की परस्पर सहभागिता एवं साझेदारी समान रही है, परन्तु यह विडम्बना ही रही है कि समाज में महिलाओं को समानता का अधिकार नहीं मिला। जीवन के हर क्षेत्र सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्र में अनेक अधिकारों का हनन हुआ और पारिवारिक एवं सामाजिक स्तर पर शोषण हुआ।[12] अतः राज्य द्वारा महिलाओ को अधिकार देने एवं उनका विकास करने के लिए नीति बनाने की आवश्यकता निरन्तर अनुभव की गई है, महिलाओं की शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ देने, उनकी आर्थिक स्थिति सुधारने और पारिवारिक एवं सामुदायिक जीवन में उनको उचित भाग ले सकने के योग्य बनाने हेतु समय–समय पर विशेष कदम उठाए जाते रहे हैं। संवैधानिक प्रावधानों महिला उपयोगी विधानों, न्यायिक टिप्पणियों, महिला अधिकारों के संरक्षण हेतु गठित आयोग व विविध महिला संगठनों के माध्यम से निरन्तर महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयास किए जा रहे हैं। उनका विकास करने के लिए नीति बनाने की आवश्यकता निरन्तर अनुभव की गई। योजना आयोग के द्वारा नियोजन के अंतर्गत शिक्षा समाज कल्याण एवं स्वास्थ्य के मुद्दे महिला विकास हेतु निर्धारित किए गए। विभिन्न योजनाओं की क्रियान्विति हेतु कानून बनाए गए तथा उनके माध्यम से महिलाओं को विभिन्न सामाजिक एवं आर्थिक सुविधाएँ दी गई। इन कानूनों में महिलाओं पर अत्याचार रोकने के कई कानून भी सम्मिलित किए गए।

महिलाओं की समस्याओं के अध्ययन एवं उन्हें देश के निर्माण में उचित भूमिका दिलाने के उद्देश्य से विभिन्न समितियों का निर्माण किया गया। राष्ट्रीय स्तर पर राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम, 1990 के तहत् महिला आयोग का गठन किया गया, जिसका उद्देश्य महिला समस्याओं के निवारण एवं महिला विकास को गति प्रदान करना है। आयोग संवैधानिक एवं अन्य विधियों के अधीन महिलाओं की गरिमा एवं प्रतिष्ठा को बनाए रखने से संबंधित सभी मामलों का अन्वेषण और परीक्षण करेगा। महिला के सामाजिक, आर्थिक विकास हेतु योजनाओं के लिए सुविधा देगा। जेल तथा अन्य संस्था जहाँ महिलाओं को कैदियों के रूप में रखा जाता है, उनका निरीक्षण करेगा और यदि आवश्यक हुआ तो संबंधित प्राधिकारी के समक्ष उचित कार्यवाही के लिए आवेदन करेगा। आयोग की 11 विशेषज्ञ समितियाँ है जिन्हें विशेष काम दिए गए है। पारिवारिक महिला लोक अदालतें महिलाओं को शीघ्र न्याय दिलाने के लिए दूरदराज स्थाना पर लगाई जाती है।[13]

महिला अधिकारों को संविधानिक प्रावधान

संविधान के अनुच्छेद 15 (1) और (3) के अंतर्गत देश के प्रत्येक नागरिक को समानता का अधिकार प्राप्त है। वहीं अनुच्छेद 14 व्यापक समता का उल्लेख करता है। अनुच्छेद 15 भेदभाव न करने की बात कहता है। इनके माध्यम से संविधान राज्य को यह अधिकार देता है कि वह महिलाओं के लिए ठोस कदम उठाए और लिंग पर आधारित भेदभाव रहित समाज बनाने का प्रयास करे। संविधान में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय, सबके लिए प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता तथा व्यक्ति की गरिमा सुनिश्चित करने का प्रावधान है। पुरूषों के समान महिलाओं को भी समान कार्य के लिए समान वेतन दिए जाने के अलावा अन्य प्रावधान भी है। जैसे– घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005, दहेज निषेध अधिनियम, 1961 के अंतर्गत दहेज लेन–देन का प्रतिषेध किया गया और इसके लिए दण्ड़ की व्यवस्था है। अनैतिक व्यवहार निषेध अधिनियम, 1987– इस अधिनियम के अंतर्गत वेश्यावृति को रोकने का प्रावधान किया गया तथा अनैतिक आचरण तथा लैंगिक शोषण के प्रयोजन के लिए कोई मकान, वाहन, स्थान इत्यादि को दण्ड़नीय माना है। स्त्रियों का अशिष्ट प्रस्तुतीकरण (प्रतिषेध अधिनियम) 1986– इस अधिनियम के अन्तर्गत विज्ञापन प्रकाशन लेखन, रेखांकन एवं चित्र कार्य एवं अन्य माध्यम से स्त्रियों का अशिष्ठ प्रस्तुतीकरण जिसमें महिलाओं के प्रति अशिष्टता का बोध होता है। जो लोक नैतिकता को गिराता है, भ्रष्ट बनाता है, क्षति पहुँचाता है। इस प्रकार का कृत्य दण्ड़नीय है। सती निवारण अधिनियम–1987–इसके अंतर्गत सती होने के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सहयोग करना या प्रेरित करना दण्ड़नीय है। बाल–विवाह निषेध अधिनियम, 2006, 1978 द्वारा वर–वधु की आयु का सीमांकन किया गया, जिनका उल्लंघन होने पर दण्ड़ का प्रावधान है। कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम–2013।[14]

मानवाधिकार व जनहित याचिका

संवैधानिक प्रावधानों से परिलक्षित होता है कि संविधान महिला अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी देता है। न्यायमूर्ति पी. एन. भगवती के अनुसार संविधान सर्वोच्च निकाय है। धरती का स्थाई कानून और सरकार का कोई भी भाग इसके ऊपर नहीं। न्यायालय संविधान का अंतिम व्याख्या कर्ता है तथा इसी न्यायालय के लिए संविधान की सीमाओं को सुनिश्चित करना भी जरूरी है।[15] पिछले कुछ वर्षों से न्यायालयों में वाद का एक नया रूप विकसित हुआ है। यह रूप पारम्परिक दावों से भिन्न है। इसमें न तो कोई वादी होता है और न कोई प्रतिवादी होता है और न राज्य अथवा शिकायतकर्ता बनाम अभियुक्त होता है। वाद का ये नया रूप खर्च की दृष्टि से कम खर्चीला और प्रभाव की दृष्टि से अधिक प्रभावोत्पादक है लेकिन इसमें वो ही वाद शामिल होते हैं जिनसे सार्वजनिक हित प्रभावित हो रहे हों।

सरकार का कोई विभाग या लोक प्राधिकरण विधि का उल्लंघन करता है अथवा अतिक्रमण, उत्पीड़न, अन्याय, शोषण या मानवाधिकारों के हनन का मामला अथवा जल ओर वायु तथा पर्यावरण के प्रदूषण जैसे कार्यों का दोषी है, जिनके लिए सामान्य सिविल या दण्डिक विधि में कोई व्यवस्था नहीं है, वहाँ इनका शिकार होने वाला कोई भी व्यक्ति कार्यवाही की शुरुआत कर सकता है। इस प्रकार की कार्यवाही को लोकहित की कार्यवाही अथवा सामाजिक हित की कार्यवाही कहा जाता है। भारत के उच्चतम न्यायालय ने गरीबों, दीनहीनों, विचाराधीन बन्दियों, बन्दिनी स्त्रियों, बन्धुआ और असंगठित मजदूरों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़ों और

दलितों आदि की समस्याओं को प्रकाश में लाने और उनको समर्थन प्रदान करने, सक्रिय भूमिका अदा करने की पहल की है।[16]

एक मजबूत, स्वतंत्र, निष्पक्ष एवं सुव्यवस्थित न्यायापालिका प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यह सरकारी प्राधिकारियों की स्वेच्छाचारी नीति को केवल नियंत्रित ही नहीं करती वरन् नागरिकों के मानव अधिकारों को संरक्षित करने में भी अहम भूमिका निभाती है। संघीय शासन व्यवस्था में न्यायपालिका का दायित्व और अधिक बढ़ जाता है।[17] मानव अधिकारों पर संवैधानिक विधियों के विकास के समकालीन समय में बहुत सारे तथ्य, उपलब्ध है और इस प्रक्रिया में कोई हस्तक्षेप के द्वारा मानव अधिकारों की सुरक्षा और प्रभावशीलता के बारे में तथ्य मौजूद है। जनहित याचिका में निहित सिद्धांत न्यायिक प्रक्रिया के विस्तार की सूचना देता है तथा सामान्य हितों की सुरक्षा एवं आम आदमी की शिकायतों का समाधान करने की पहल के रूप में आशा की किरण जागी है। जनहित याचिकाओं के द्वारा न्यायपालिका की सक्रियता के कारण गरीब, कमजोर, दलित, शोषित–पीड़ित, सामाजिक और आर्थिक रूप से असहाय लोगों और महिलाओं को न्याय दिलाने में मुख्य भूमिका है।[18]

न्यायमूर्ति बी. आर. कृष्णा अय्यर और पी. एन. भगवती ने जनता की शिकायतों एवं उनकी पीड़ाओं को सस्ता न्याय दिलाने के लिए विशेष कदम उठाए और विभिन्न समितियों का गठन किया गया। कानूनी सहायता के लिए भगवती समिति 1971, प्रक्रियात्मक न्याय के मामलें में कृष्णा अय्यर समिति 1973, कृष्णा अय्यर समिति एवं भगवती की संयुक्त उच्च स्तरीय समिति 1976, राजस्थान कानून सुधार आयोग, 1975 एवं भारत सरकार की न्याय संबंधी समिति 1976 आदि द्वारा गरीबों को न्याय दिलाने के लिए सरकारी प्रयासों के संकेत दिए, परिणामस्वरूप सर्वोच्च न्यायालय ने एक नवीन न्यायिक प्रक्रिया जनहित वाद कानूनी सहायता प्रदान करने के लिए एक रणनीतिक उपाय है जिसका लक्ष्य गरीब, असहाय, अन्याय के शिकार लोगों को न्याय दिलाना है और सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा को लोकहित वादों के माध्यम से एक साकार रूप में नई दिशा प्रदान करना है। लोकहितवादी की अधिकारिता संविधान के अनुच्छेद 32 में उच्चतम न्यायालय एवं अनुच्छेद 226 में उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर की जा सकती है। लोकहित वाद विषय सूची अत्यंत विस्तृत है यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है कि किसे जनहित वाद माना जाए।[19] न्यायिक निर्णय के आधार पर महिला उत्पीड़न, नारी निकेतन की दुर्दशा, नेत्रहीन बालिकाओं का यौन शोषण आदि विषयों को महिला मानव अधिकारों की रक्षा के लिए लोकहित वाद की श्रेणी में रखा गया है।[20]

राजधानी को महिलाओं के लिए सुरक्षित बनाने हेतु कानून के छात्र द्वारा लोकहित में महिला मानवाधिकारों को सुरक्षित रखने के लिए जनहित याचिकाएँ प्रकाश में आई, जैसे–16 दिसम्बर, 2012 की घटना नई दिल्ली में सामूहिक बलात्कार और नृशंस हत्या की वारदात के संदर्भ में दायर की गई। याचिका में बलात्कार की शिकार युवतियों का मुआवजा दिलाने के लिए अपराधिक–आघात मुआवजा बोर्ड गठित करने का निर्देश देने का सर्वोच्च न्यायालय से अनुरोध किया गया। याचिका में कहा गया कि मोटर वाहन कानून का उल्लंघन करने वाले वाहनों का लाइसेंस भी रद्द किया जाना चाहिए। याचिका पर सुनवाई के दौरान न्यायालय ने टिप्पणी कि हम सुरक्षा के माहौल को लेकर अधिक चिंतित है। जहाँ महिलाएँ सम्मान और गरिमा के साथ काम न कर सके। न्यायालय ने इसके साथ ही केन्द्र और दिल्ली सरकार तथा राष्ट्रीय महिला आयोग से जबाब तलब किया है तथा बस मालिक को किसी ऐसे मार्ग पर बस सेवा संचालन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए जिस पर उसकी किसी बस में कानून का उल्लंघन किया है।[21]

यौन संबंधों में रजामंदी की उम्र सीमा को लेकर सर्वोच्च न्यायालय में एक गैर सरकारी संगठन आर्ट थॉट के द्वारा 2013 में लायी गई। याचिका में विवाहित युगल के वास्ते सहमति से सेक्स के लिए न्यूनतम आयु 18 वर्ष तय किए जाने की मांग की गई। भारतीय दण्ड़ संहिता (आई.पी.सी.) 375 में जहाँ 15 साल तक की शादीशुदा लड़की के साथ यौन संबंध कानूनी है और इसे बलात्कार नहीं माना जाता, जबकि कानूनी रू॰ से 18 साल से कम उम्र के बच्चे क साथ यौन संबंध बलात्कार है। याचिका में कहा गया है कि सिर्फ विवाहित होन की वजह से किसी लड़की के साथ यौन संबंध की उम्र सीमा कम करना ठीक नहीं है। अतः अदातल निर्देश देकर यौन संबंधों में रजामंद की आयु 18 वर्ष निर्धारित करे चाहे वह विवाहित हो या नहीं। साथ ही भारतीय दण्ड़ संहिता की धारा 375 (यौन हिंसा) में संशोधन करने का निर्देश देने का अनुरोध किया गया। न्यायमूर्ति के. एस. राधाकृष्णन की अध्यक्षता वाली खण्डपीठ ने याचिका पर सुनवाई करते हुए केन्द्र सरकार को नोटिस जारी किया[22] जिसमें पति से यौन संबंध के लिए पत्नी की सहमति देने की आयु के बारे में अपवाद का प्रावधान है। धारा 375 के इस अपवाद में अपराध विधि संशोधन अध्यादेश 2013 के तहत संशोधन कर दिया गया था। जिसमें एक व्यक्ति द्वारा अपनी पत्नी के साथ यौन कृत्य बलात्कार नहीं होगा। यदि पत्नी की आयु 15 वर्ष से कम नहीं है। याचिका के इस संशोधन को चुनौती देते हुए गैर सरकारी संगठन के वकील विक्रम श्रीवास्तव ने दलील दी कि यदि वयस्क होने की आयु 18 वर्ष निर्धारित की गई है तो यही आयु महिला के लिए सहमति से यौन संबंध स्थापित करने के लिए भी होनी चाहिए।

महिलाओं को मंदिर में प्रवेश के अधिकार के सिलसिले में केरल सबरीमाता मंदिर में 10 से 50 वर्ष की उम्र की महिलाओं के प्रवेश पर रोक के मामले में आई जनहित याचिका मे कहा गया कि मंदिर में महिलाओ के प्रवेश ना करने देना उनके साथ भेदभाव करना है। इससे पहले केरल की यू. डी. एफ सरकार ने भी मंदिर प्रशासन के समर्थन मे कहा था कि धार्मिक मान्यताओं की वजह से महिलाओं को मंदिर में प्रवेश करने की इजाजत नहीं दी जा सकती। भगवान अय्यपा को ब्रह्मचारी और तपस्या में

लीन माना जाता है। लेकिन सरकार बदलने के बाद यू. डी. एफ सरकार ने स्टैंड बदलते हुए कहा कि मंदिर में सभी उम्र की महिलाओं को प्रवेश की इजाजत दे देनी चाहिए, जबकि साबरीमाला मंदिर में परम्परा के अनुसार 10 से 50 वर्ष की महिलाओं के प्रवेश पर प्रतिबंध है। मामले की सुनवाई 5 जजों की संविधान पीठ करेगा, पीठ को यह तय करना है कि क्या महिलाओं के बायोलॉजिकल फेक्टर के आधार पर मंदिर में प्रवेश पर रोक समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है। क्या महिलाओं पर रोक के लिए धार्मिक संस्थाओं में चल रही इस प्रथा को इजाजत दी जा सकती है। क्या साबरीमाला धार्मिक संस्था की यह रोक संविधान के अनुच्छेद 25 के तहत् धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार के दायरे में है। क्या अयप्पा मंदिर अलग धार्मिक संस्था है और अगर है तो क्या वह संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत समानता के अधिकार का हनन कर सकता है और क्या महिलाओ पर यह रोक केरल हिन्दू पब्लिक वरशिप एन्ट्री एक्ट का हनन है।[23] याचिका पर सुनवाई के दौरान सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि पुरुषों की तरह महिलाओं को भी सबरीमाला मन्दिर में जाकर पूजा का अधिकार है। संविधान पीठ ने कहा मन्दिर में जाने का अधिकार कानून का मोहताज नहीं यह संवैधानिक अधिकार है।[24]

वर्ष 2017 में हिन्दू महिलाओं पर तीन तलाक लागू नहीं होना चाहिए के मुद्दे पर सर्वोच्च न्यायालय में अधिवक्ता विजय शुक्ला द्वारा जनहित याचिका दायर की गई। याचिका केन्द्र सरकार को यह निर्देश देने के लिए दायर की गई कि मुस्लिम पुरूषों से विवाह कर चुकी हिन्दू महिलाओं पर तीन तलाक या बहुविवाह के नियम लागू नहीं होने चाहिए। तीन तलाक से प्रभावित हिन्दू महिलाओ की दुर्दशा को देखते हुए यह याचिका दायर की गई और यह भी माँग की गई कि विशेष विवाह अधिनियम के तहत् अन्तरजातीय विवाह के लिए पंजीकरण को अनिवार्य बनाने के लिए केन्द्र सरकार को निर्देश दिया जाए।[25]

इस प्रकार की जनहित याचिका मद्रास हाईकोर्ट में वर्ष 2016 में दायर की गई जिसमें राज्य एच. आर. एवं सी. ई. विभाग के एक नियम को चुनौती दी गई जिसके तहम एक खास अवधि के दौरान महिलाओं को मंदिर में प्रवेश से रोका गया। इस अवधि के दौरान महिलाओं को परम्पराओं के अनुसार मंदिर में प्रवेश की इजाजत नहीं थी। विल्लुपरम् जिले की एस. आरती द्वारा दायर जनहित याचिका जब न्यायमूर्ति टी. एस. शिवग्ननम् और न्यायमूर्ति पुष्पा सत्यनारायण की पीठ के समक्ष सुनवाई के लिए आई तो यह रेखांकित किया गया कि मंदिर में महिलाओं के प्रवेश को रोकने का बड़ा मुद्दा सर्वोच्च न्यायालय में विचाराधीन है। इसलिए इस याचिका पर सुनवाई अभी नहीं जा सकती।[26]

इसी प्रकार मुस्लिम महिलाओं के तीन तलाक का मुद्दा सर्वोच्च न्यायालय में पहुँचने से पहले मध्यप्रदेश उच्च न्यायालय में 2010 में एक मुस्लिम महिलाओं के एन. जी. ओ. ने पहली बार जनहित याचिका दायर की थी, जिसमें मेहर की रकम, तीन तलाक में मनमाने तरीके पर न्यायालय के दखल की माँग की गई थी। हालांकि बाद में यह मुद्दा मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के हवाले कर दिया गया।[27]

निष्कर्ष

लोकहितवाद का मुख्य उद्देश्य समाज में कमजोर, शोषित व पीडित वर्ग को न्याय सुलभ कराना है। यह मानवाधिकारों की अवधारणा का पोषक है। वर्तमान में न्यायिक सक्रियता एवं लोकहितवादी अवधारणा के परिणामस्वरूप न्यायिक प्रणाली मानवीय अधिकारों के संरक्षण का प्रभावशाली तन्त्र बन गया है। न्यायपालिका ने सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा को लोकहितवाद के माध्यम से एक साकार रूप में नई दिशा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भारत के संविधान ने न्यायपालिका की सर्वोच्च न्यायिक संस्था को अनुच्छेद 32 तथा राज्य की सर्वोच्च न्यायिक संस्था उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु सुनवाई एवं कार्यवाही के प्रावधान किये हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मानवाधिकारों के लिए नियमित रूप से प्रयास किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने सार्वभौम मानवाधिकार घोषित कर विश्व के नागरिकों को व्यापक अधिकार प्रदान किये गये। भारत में मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु न्यायिक संस्थाओं के स्तर पर कानूनी सहायता हेतु भगवती समिति 1971, प्रक्रियात्मक न्याय के मामले कृष्णा अय्यर समिति 1973, कृष्णा अय्यर एवं भगवती की संयुक्त उच्च स्तरीय समिति 1976, राजस्थान कानून सुधार आयोग 1975 एवं भारत सरकार की न्याय संबंधी समिति 1976 आदि द्वारा गरीबों को न्याय दिलाने के लिए सरकारी प्रयासों का वास्तविक प्रारम्भ था। कलावधि में उक्त सभी प्रयासों से प्रेरणा लेते हुये भारत की विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालयों ने जनहित के विभिन्न मुद्दों को लेकर जनहित याचिकाओं द्वारा जनहित में निर्णय देकर मिसाल कायम की है। इसी प्रकार देश का सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण, महिला उत्पीड़न, बालश्रम, जल व वायु प्रदूषण इत्यादि अत्यधिक गम्भीर मुद्दों पर भारत सरकार की खिंचाई करते हुए आवश्यक एवं गम्भीर कदम उठाने के समय–समय पर निर्देश दिये हैं।

हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने महिला अपराधों जैसे गेंगरेप, योन उत्पीड़न, छेड़छाड़ी, महिलाओं का मन्दिरों में प्रवेश निषेध और मुस्लिम महिलाओं का तीन तलाक जैसे गम्भीर मामलों पर जनहित याचिका स्वीकार कर सरकारों एवं प्रशासन को आवश्यक दिशा–निर्देश प्रदान कर अपराधियों के खिलाफ कार्यवाही करने के आदेश जारी किये। जनहित के मामलातों पर नियमित एवं तीव्र गति (फास्ट ट्रेक) की सुनवाई कर कठोर निर्णय सुनाये। यहाँ तक कि उत्तरदायी प्रशासनिक एवं पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध भी कार्यवाही भी अमल में पाई गई। इसके बावजूद भी अनुसन्धान अधिकारी आवश्यक कार्यवाही में विलम्ब कर देते हैं जिससे न्यायालय की प्रक्रिया में भी अत्यधिक विलम्ब हो जाता है और अपराधी को अपेक्षित समय में सजा नहीं हो पाती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *ज्ञान सिंह सन्धु, राजनीति सिद्धांत, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1988 पृष्ठ सं.– 215*
2. *उपरोक्त, पृ. सं. 225, 226*
3. *राष्ट्र संघ के अधिकार पत्र के अनुच्छेद 55 एवं 56।*
4. *राष्ट्र संघ चार्टर की धारा 68 के तहत् 1946 में श्रीमती एलोन और रिजल्ट की अध्यक्षता में मानवाधिकार के प्रारूप की रचना हेतु मानवाधिकार आयोग गठित किया गया।*
5. *डॉ. जनक सिंह मीना–मानवाधिकार संकल्पना एवं यथार्थ, पब्लिकेशन, राजस्थान। हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 2015 पृ. 65*
6. *उपर्युक्त, पृ.–62*
7. *http://www.ielrc.org / content / 90003, pdf.*
8. *http://www.legalservicesindia.com/ articles/sc_c.htm*
9. *S. P. Sathe & Sathya Narayan, 2003: The world's most powerful count: Finding the roots or India's Public Inerest Litigation revolution in the Hussianara Khatoon Prisoner's case in Liberty, Equality and Justice : Struggles for a new social order. EPC Publishing (P) Ltd., Lucknow.*
10. *http://www.vakilno1.com / legal-advice/know-public-interest-litigation-pil.htm.*
11. *Surya Deva 2009: Public Interest Litigation in India: A Critical Review, Sweet & Maxwell London.*
12. *डॉ. प्रियंका माथुर, महिला सशक्तिकरण, ज्योति प्रकाशन, जयपुर 2010 पृ. सं. 50*
13. *शर्मा राधाकृष्णन, मानव अधिकार एवं भारतीय संविधान, राज्य शास्त्र समीक्षा, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, 2005 पृ. 94*
14. *वी. अमुदावल्ली, महिलाओं की शिकायतों का निवारण योजना, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, फरवरी, 2018 पृ. सं. 30*
15. *राज्य बनाम भारत संघ, ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1361*
16. *डॉ. जे.पी. नेमा, डॉ. के.के. शर्मा, मानवाधिकार सिद्धान्त एवं व्यवहार, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, नई दिल्ली, 2004, पृ. 195, 196*
17. *अरूण राय, भारत में जनहित याचिका और मानवाधिकार अनु. नन्दलाल स्वर्णकार, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2003 पृ. सं. 84*
18. *उपर्युक्त पृ. सं. 56।*
19. *डॉ. बसंती लाल बाबेल, न्यायिक प्रक्रिया, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन इलाहाबाद, 2012 पृ. सं. 109, 110*
20. *प्रतुल कुमार सिन्हा बनाम स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ए. आई. आर. 1989 एस. सी. 1783*
21. *https://Khabar.ndtv.com, 11.2.2013, NDTV India.*
22. *https://Khabar.ndtv.com, 10.7.2013, NDTV India.*
23. *https://Khabar.ndtv.com, 17.2.2018 NDTV, India.*
24. *https://aajtak.intoday.in.story 22/04/2017 iwue "kekZ] fnus"k vxzgfj] ubZ fnYyhA*
25. *https://Khabar.Ndtv.com, 22/01/2016*
26. *https://www.patrika.com.first triple talaq-pil….. Sanjana Kumar 22.8.2017.*
27. *सुप्रीम कोर्ट ने कहा पुरुषों की तरह महिलाओं को भी सबरीमाला मन्दिर में जाकर पूजा का अधिकार है। दैनिक भास्कर, 19 जुलाई 2018, पेज.–1*